षष्ठ अध्याय || पृष्ठ 154-166

"भूले बिसरे चित्र' उपन्यास की भाषाशैली

× × ×

'भूले बिसरे चित्र' जीवनी - शैली में लिखा गया बृहत् उपन्यास है, जिसमें एक ही परिवार के चार पीढ़ियों की इतिहास - गाथा कही गई है । उपन्यास में वर्णनात्मक, उध्दरणात्माक, व्यंग्यात्मक, चित्रात्मक, सांकेतिक, प्रतिकात्मक तथा भावात्मक शैलियों का सफल प्रयोग हुआ है । उपन्यासों में शिल्प की चर्चा करते समय भाषा की संवेदना का महत्व बढ़ जाता है । इस दृष्टि से डा. सुरेश सिनहा का मत अवलोकनीय है । उनके मतानुसार - "प्रत्येक भाषा का अपना जातीय संस्कार होता है, जो यथार्थ तत्वों को ग्रहण कर रूप ग्रहण करती है । इसे हम यह भी कह सकते हैं कि भाषा का वह रूप, जो हमारा अपना हो । उसके साथ हमारा आत्मीय सम्बन्ध स्थापित होना आवश्यक है । प्रामाणिक अनुभूतियों की अभिव्यक्ति तभी अर्थवान हो सकती है, जब भाषा अपने जातीय संस्कारों के साथ सार्वजनिक रूप में कथ्य को उपस्थित करती है ।"[1] इस संदर्भ में 'भूले बिसरे चित्र' की भाषा खरी उतरती है । उपन्यास की भाषा संवेदनशील होते हुए भी व्यावहारिक तथा बोधगम्य है ।

"उपन्यासकार के पास दो ही कारगर अस्त्र होते हैं, एक तो उसकी भाषा और दूसरी शैली, जिनकी सहायता से वह अभिप्सित रंगों के दृश्य - विधान में पात्रों के स्वाभाविक चरित्र उद्घाटित करता है । पात्र - चरित्र, कथोपकथन एवं परिप्रेक्ष्य का स्वाभाविक और सजीव चित्रण - जिससे पाठक के मानस - पटल पर एक चित्र - सा खिचता जाय - भाषा के धनी उपन्यासकार के बिना सम्भव नहीं है ।"[2] भाषा-शैली की दृष्टि से भगवती बाबू की भाषा उल्लेखनीय है । उनके उपन्यासों की लोकप्रियता में उनकी भाषा - शैली की सरलता, प्रवाह, सजीवता, सूक्ति, मुहावरें और लोकोक्तियों से समृध्दि, सहज अलंकृति तथा व्यंग्यात्मकता का भी पर्यापत योगदान है । भगवतीचरण वर्मा के उपन्यासों के विशेष अध्येता डा. बैजनाथ प्रसाद शुक्ल उनके उपन्यासों की भाषा के संदर्भ में लिखते हैं - "वर्माजी के उपन्यासों की भाषा सरल, सुबोध है । वह पात्रों के भावानुसार चित्र निर्माण करती है तथा दृश्य और प्रसंग - विधान के अनुसार चित्र निर्माण करती है । फलतः इसमें इन्द्रधनुषी आभा देदीप्यमान है । उनकी भाषा में सलिला-सा सलिल प्रवाह होने के कारण विप्लवगायक की स्वरलहरी की तरह मानव-मन को स्पन्दित और उद्वेलित करने की महान शक्ति सन्निहित है । इसमें प्रभात-सा जीवन का उल्लास सहज - स्वाभाविक रूप में व्यक्त हुआ है ।"[3] भाषा - शैली की इन विशेषताओं के कारण उनके उपन्यासों को पढ़ते समय पाठकों को एक विशेष प्रकार के रस का आस्वादन होता रहता है और हम उपन्यासकार की मार्मिक अनुभूति -

क्षमता और गहन मानवीय अन्तर्दृष्टि के साथ-साथ उसकी प्रवाहमयी भाषा - शैली की प्रसंसा किये बिना नहीं रहते ।

वस्तुतः वर्माजी एक सौंदर्यप्रिय प्रयोगवादी उपन्यासकार हैं । साहित्य और साहित्यकार के सम्बन्ध में उनकी यही मान्यता रही है कि, "क्या कहा जाता है ? कला इसमें नहीं है, कैसे कहा जाता है ?" कला इसमें है । भावना तो हरेक व्यक्ति में है लेकिन भावना की अभिव्यक्ति की क्षमता जिस व्यक्ति में है वही कलाकार कहलाता है ।"[4] उनके उपन्यासों का रसास्वादन अल्प शिक्षित पाठक भी कर सकते हैं किन्तु उनके 'चित्रलेखा' उपन्यास की भाषा जितनी परिमार्जित, अलंकृत, सैध्दांतिक है, उतनी ही पाण्डित्यपूर्ण है । अन्य उपन्यासों की भाषा साधारणतः ग्राम्य और नागरिक जीवन की आम बोलचाल की भाषा है ।

शब्दावली की दृष्टि से 'भूले बिसरे चित्र' की भाषा तीन प्रकार की है --

1. ग्रामीण पात्रों की भाषा तद्‌भव और स्थानीय (देशज) शब्दों की जन-भाषा है जिसमें उर्दू - फारसी के प्रचलित शब्दों का प्रचुर मात्रा में प्रयोग है ।

2. शहरी पात्रों की भाषा में तत्सम और तद्‌भव शब्दावली का प्रायः समतुल्य प्रयोग मिलता है । इसमें अरबी - उर्दू - फारसी तथा अंग्रेजी के आम प्रचलित शब्दों का प्रयोग विपुल मात्रा में हुआ है । वैसे सारे उपन्यास की भाषा उर्दू - फारसी - युक्त है ।

3. तीसरे प्रकार की भाषा अदालती कारोबार की है, जिसमें अरबी फारसी के तत्सम और तद्‌भव शब्दों का आधिक्य है । साथ-ही साथ अंग्रजी शब्दों का भी यत्र-तत्र प्रयोग मिलता है । अदालती कारोबारकी भाषा ग्रामीण - भाषा के निकट जा पहुँची है । इसी प्रकार उपन्यासकार की निजी टिप्पणियों की भाषा में प्रायः तत्सम शब्दावली का ही आधिक्य होते हुए भी देशी - विदेशी शब्दों का ऐसा उन्मुक्त प्रयोग दृष्टिगत होता है कि कहीं - कहीं तो वह उर्दू - फारसी भाषा के निकट जा पहुँची है । भाषा में प्रयुक्त शब्द के संदर्भ में वर्माजी की अपनी निजी मान्यता रही है, उनके मतानुसार - 'शब्द को भावना को वहन करने का माध्यम मैं नहीं मान सकता । मेरी स्थापना यह है कि शब्द केवल भावना को व्यक्त करता है, उसे वहन नहीं करता । शब्द हमारे हर्ष - विषाद से दूसरों को भासित भले ही कर दे, पर हमारे हर्ष - विषाद को दूसरों तक पहुँचाकर उन्हें उनमें तन्मय कर दे, यह सामर्थ्य मै शब्द में नही देख पाता ।"[5] उपर्युक्त सभी प्रकार की भाषा शैली के उदाहरण अवलोकनीय हैं --

"तो फिर ज्वाला के खाय - पियें का कौन इन्तजाम होई ?" छिनकी ने प्रश्न किया ।

"अरे, वहाँ कोई महाराज रख लेगा । बड़ा अफ़सर होकर जा रहा है, उसे नौकर - चाकर की क्या कमी ? मैंने ज्वाला को सब - कुछ समझा - बुझा दिया है, तू इसकी फिक्र मत कर।"

"बलीहारी जाऊँ तुम्हारी अक्किल पर ।" छिनकी ने मुंह बनाते हुए कहा, "नौकरन के बल पर कबहूँ कौनो की गिरस्ती चली हे कि ज्वाला की ही गिरस्ती चलि है । परदेस का मामला, हकूमत का जोर और ऊपै भद्दर जवानी की उमिर । मान लेव ज्वाला कौनो जवान पठिया घर माँ बैठाय लेय तो ?"[6] छिनकी और मुंशी शिवलाल के वार्तालाप में मात्र एक तत्सम शब्द 'बल' का ही प्रयोग मिलता है अन्यथा पूरी शब्दावली तद्भव, देशज और उर्दू फारसी की है । शहरी पात्रों की भाषा - शैली के उदाहरण स्वरूप लाल रिपुदमनसिंह और गंगाप्रसाद का वार्तालाप अवलोकनीय है --

'लाल रिपुदमनसिंह मुस्कराए, "धन्यवाद । जिस बुन्देलखंड को सोचा था सदा के लिए छोड़ आया, वहाँ फिर जाना पड़ गया । अच्छा नहीं लगा, तो तीन महीने की छुट्टी ले ली मैंने ।

गंगाप्रसाद ने आश्यर्च से पूछा, "तीन महीने की छुट्टी ले ली, तो यह ज्वाइण्ट मजिस्ट्रेट का चांस छोड़ दीजिएगा ?"

'नहीं, चार्ज लेकर छुट्टी ली है, चांस नहीं जाएगा । फिर बाबू गंगाप्रसाद, अब मैं उन्नति और अवनति से बहुत दूर हट गया हूँ, यद्यपि रानी साहिबा मुझे फिर इस ओर घसीटने का प्रयत्न कर रही हैं । खैर छोड़ो भी, बैठो न । तुम अपनी बतलाओ । शायद अपने द्वारा बनने वाली रानीं के बुलाने से आए होंगे । बधाई देता हूँ तुम्हें इस कृति पर । आज भौजी सरकार ने बतलाया कि उसकी बहुत बड़ी - बड़ी जगह पहुँच है । . वाईसराय के ए.डी.सी. से उसकी दोस्ती है, गवर्नर की बीबी से मिलती - जुलती है, यहाँ के राजाओं और रईसों को उँगलियों पर नचाती है । तो बाबू गंगाप्रसाद, एक बार मैं तुम्हें फिर बधाई देता हूँ तुम्हारी इस सृष्टि पर । लेकिन वह तुम्हारी रानी साहिबा सतवंत कुँवर - संतो कहते थे न तुम उसे - तो वह नहीं आई तुम्हारे साथ । भौजी सरकारने उनके आनेका जिक्र किया था। तुम्हारा तो कुछ जिक्र नहीं हुआ था । "[7] प्रस्तुत उध्दरण में नागरिक पात्रों के मुख से धन्यवाद , बुन्देलखण्ड , आश्चर्य , उन्नति,अवनती,यदयपि , प्रयत्न , बधाई , कृति सृष्टि आदि तत्सम शब्दोका प्रयोग कराया गया है जिनका ग्रामीन पात्रो के वार्तालाप में अभाव है। उसी प्रकार जिक्र , खैर , शायद आदि अरबी फारसी के तथा ज्वाइंण्ट मजिस्ट्रेट ,चांस, चार्ज, वाईसराय - ए.डी.सी. , गवर्नर के अंग्रेजी शब्दोंका भी प्रयोग सफलता से हुआ है।

अदालती भाषा के संदर्भ में मुंशी शिवलाल द्वारा लिखे गये इस्तगासे की भाषा अवलोकनीय है --

"मन की भूपसिंह, वल्द अनूपसिंह, उम्र तखमीनन पच्चीस साल, कौम ठाकुर, पेशा काश्तकारी, साकिन हाट बिशनपुर, तहसील फतहपुर, जिला फतहपुर, कल बरोज बुधवार तारीख 4 जुलाई, सन् 1985 तहसील गंज की बाजार में गल्ला फरोख्त करने गया था। बवक्त वापसी बाजार से फिदवी मुसम्मी मैकूलाल, वल्द, जोखूलाल, उम्र तखमीनन अठ्ठाईस साल, कौम बक्काल, पेशा सुदखोरी, सांकेन गंज के मकान के सामने से तनहा गुजर रहा था। उस वक्त मुसम्मी मैकूलाल अपने दरवाजे के सामने खड़ा पड़ोस के किसी आदमी से गाली - गलौज कर रहा था। फिदवी को देखते ही मुसम्मी मैकूलाल ने कड़ककर फिदवी से उस कर्ज का तकाजा किया जो फिदवी मुसम्मी मैकूलाल को एक अरसा हुआ सूद-दर-सूद के अदा कर चुका है, लेकिन जिसकी अदायगी की रशीद नहीं दी। फिदवी ने जब मुसम्मी मैकूलाल से कहा कि फिदवी इस गाली - गलौज पर मुसम्मी लाला मैकूलाल पर हतक - इज्जती का मुकदमा चलाएगा तो मुसम्मी मैकूलाल ने बिना कुछ कहे - सुने फिदवी पर हमला बोल दिया।"[8] इस उध्दरण में अरबी - फारसी शब्दों की ही भरमार है। उसी प्रकार लेखक की निजी टिप्पणी की भाषा का एक उदाहरण द्रष्टव्य है --

"सर्वदल सम्मेलन हुआ, लेकिन बड़े निराशाजनक वातावरण में। वायसराय की घोषणा पर ब्रिटिश पार्लमेंट में जो - जो बाते की गई तथा उससे देश का नवयुक - समुदाय बहुत अधिक क्षुब्ध हो उठा। देश का नवयुवक ब्रिटिश शासकों की छल - कपट - भरी नीति का शिकार बनने को तैयार नहीं था। उसमें उमंग थी, उत्साह था, संघर्ष के प्रति मोह था, प्राणों की बाजी लगाने का शौक था। इस नवयुवक समुदाय का नेतृत्व जवाहरलाल नेहरू और सुभाषचन्द्र बोस के हाथ में था।"[9] तत्सम, तद्‌भव और विदेशी सभी प्रकार की शब्दावली का उन्मुक्त प्रयोग परिलक्षित होता है।

"भूले बिसरे चित्र' में से कुछ तद्‌भव, देशज और विदेशी शब्द नीचे दिये जा रहे हैं --

तद्‌भव - गिरस्ती, मरदूद, जियत, भूत - परेत, ब्याह, नौकरन, परदेस, उपै, भद्‌दर, उमिर, उरिन, धंधौ, भूकन, छमा, लाज - सरम, लोगन, ऊकेर, धरम, भसम, साया, अँगरे - जिउ, हविस, बिपदा, फुरसतौ, बिधन, सुलच्छन, कुद्‌रती, मनई, किरपा, दरसन, गिनबा, गिरौ, गरब, साध अदि।

देशज - मडैया, कुलहड़, चिठ्ठा, महाराज, पठिया, गौना, खिलावन, अघले, गौनहरिन, जमा-जथा, दारू, हसली, बरेक्षा, ससुरी, होली, पीवा, लच्छा, अन्धेर (अन्याय), कचरी, महतारी, कुलच्छनी,

त्रिवेणी । गुईंया, भड़ास, पुरूब, बाँदा (बनारस) साँकल, बेयरा आदि ।

उर्दू - अरबी - फारसी - कानूनगो, अहलमद, नजिर मदरसा, बरखुरदार, तौबा, इसरार, बुजुर्ग, मुनासिब, दौलत, दीन-ईमान, बजात, आगाह, मजहब, शिरकत, मलाल, महज, रब्त - जब्त, खबर, तजुर्बा, खैरियत, फरिश्ता, वालिद, तरमीम, लफज, गुनाह, नशा, जमीन - जायदाद, कसम, हरारत, दाखिल - खारिज, मिसरा, गुसलखाना, जईत, हुकूमत, जिक्र, साकिन, तारीख, नामजद, तकरीर, तहजीब, सवारत, गुरेज, मुग्ज, हलफ, गुरिव, दर्द सार आदि । ग्रामीण पात्रों की भाषा में अरबी - फारसी शब्दों के भी तद्भवीकरण की प्रवृत्ति परिलक्षित होती है, जैसे - कुद्दरती (कुदरती), अविकल (अव्वल) हकूमत (हुकूमत) इमतिहान (इम्तिहान) ।

अंग्रेजी - कमेटी, वालंटिचर, असिस्टेण्ट सिविल सर्जन, डॉक्टर, प्राइवेट प्रेक्टिस, सब-जज, जेनरेशेन्स, साउथ, इण्डिया एण्ड द रिजल्ट, डान्स, मेमोरेण्डम, जूनियर, रिप्रेजेण्टेशन, सेकण्ड डिविजन, क्रिकेट -- गेम ऑफ चांस, ज्वेलर्स, कम्पार्टमेंट, बर्थ, क्लब, लंच, डिनर, मीटींग, मूवमेंट, पार्टी, ऑफिस, रिवाल्वर, बोर्डिंग हाउस, ग्रेजुएट, बिजनेस, रजिस्टर, वारण्ट आदि । अंग्रेजी शब्दों के भी तद्भवीकरण की प्रवृत्ति पाई जाती है, जैसे - कलट्टर, पालमिंट, आर्डर, रिकार्ड, लीडरी, किरिस्तानी आदि । वर्माजी ने परिस्थिति के अनुकूल ही अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग किया है वर्ना उनका उनकी ओर उर्दू - फारसी - अरबी के शब्दों की तरह रूझाव नहीं रहा है ।

शब्द प्रयोग की दृष्टि से भगवती बाबू प्रेमचन्द की तरह प्रायः समानार्थी शब्द - युग्म का प्रयोग करके भाषा प्रवाह और चारूत्व को निखारने की कला में सिध्दहस्त हैं । इस प्रकार के शब्द प्रयोग के कतिपय उदाहरण अवलोकनीय हैं --

दावत - तजावत, राज-पाट, चहल - पहल, चलते - फिरते, खानदान - कुनबा, लड़का - बच्चा, पढ़ना - यढ़ना, घुमने - फिरने, अनाप - शनाप, हतक - इज्जती, वाही - तबाही, गाली - गलौज, घर - गृहस्ती, जगा - जथा, रूपये - पैसे, मान-मर्यादा, अमोद - प्रमोद, मिप - वमन, असबाब - वसबाब, रोजगार - वोजगार, जान-पहचान, मुहल्ले - पड़ोस, सामान - वामान, इर्द - गिर्द, खाना - वाना, दावत - तजावत, चीज-बस्त, थकावट - वकावट, चरखे - वरखे आदि ऐसे शब्द - युग्म हैं जिनसे भाषा की सजीवता में मानों चार चाँद लग गए हैं ।

चित्रात्मकता या बिम्ब - विधायनी शक्ति मूलतया काव्य भाषा का गुण है किन्तु 'भूले बिसरे चित्र' में भी यह शक्ति विद्यमान है । वर्ण्य - विषय चाहे किसी पात्र की आकृति का हो अथवा प्राकृतिक दृश्य, वर्माजी पाठकों के मनःचक्षुओं के समक्ष उसका सजीव चित्र उपस्थित कर देते हैं । इसके लिए प्रेमशंकर का व्यक्तित्व - चित्रण अवलोकनीय है --

"प्रेमशंकर एल - एल.बी. फाइनल में पढ़ रहा था और वह उम्र में नवल से काफी बड़ा था, लेकिन देखने में वह नवल का समवयस्क लगता था । गोरा-सा, सुन्दर सा, मझोले कद का नवयुवक, आँखे बड़ी - बड़ी और गहरी काली, बाल बीच से खिंचे हुए । प्रेमशंकर के समस्त व्यक्तित्व में एक प्रकार की कोमलता थी । उसकी वाणी में एक प्रकार की मिठास थी, और आँखे कुछ खोई - खोई सी थी । प्रेमशंकर ने एम.ए.फर्स्ट डिवीजन में पास किया था; उसके बाद वह वकालत पढ़ने लगा ।"[10] उसी प्रकार बर्फिली रात में विद्या की मानसिक स्थिति का चित्र देखिए - "जिंदगी का रूप वह देख रही है - उस बरफीली रात की भाँति चुभती हुई, काटती हुई । लेकिन उसे सरदी नहीं लग रही थी, उसकी धमनियों में गरम रक्त प्रवाहित हो रहा था । उस चुभती हुई सर्द हवा से उसके अन्दर एक पुलकन - सी हो रही थी । विद्या ने अनुभव किया कि इस चुभने वाले और काटने वाले हिम - सदृश जीवन का मुकाबला कर सकती है हृदय की उष्णता और धमनियों में निरंतर गति से संचरित होने वाला गरम रक्त ।"[11]

'भूले बिसरे चित्र' की भाषा अवसारानुकूल मुहावरों, लोकोक्तियों और जीवन - मर्म को उद्घाटित करने वाली सूक्तियों से समृध्द हो उठी है, जिसके कारण सहज - बोधगम्यता, चित्रात्मकता, प्रवाहमयता तथा स्वाभाविकता के गुण पर्याप्त मात्रा में सम्मिलित हो गये हैं । भाषा में प्रयुक्त छोटे - छोटे मुहावरों, कहावतों और लोकोक्तियों से उपन्यास में लाक्षणिक अर्थवत्ता का संचारण हो गया है । उपन्यास में प्रयुक्त मुहावरों लोकोक्तियों और सूक्तियों में से कतिपय उदाहरण इस प्रकार है --

गाज गिरना, पार न पाना, चारों उँगलियाँ घी में होना, अक्ल घास चरने जाना, बौराय जाना, कान काटना, पेट का पानी न पचना, मिर्चे जलना, करवटें बदलना, अक्ल दुरूस्त होना, अक्ल चक्कर में पड़ना, दाल में काला होना, प्राण पक जाना, कुन्दी बनाना, बाज न आना, बे सिर पैर की बात, इक्कीस बैठना, प्यासा कुएँ के पास जाता है, नाक कटना, जड़ खोदना, जीभ में आग लगना, जान बची लाखों पाए, न नौ मन तेल होगा न राधा नाचेगी, एक मौन सौ बलाओं को टालता है, देर आयद दुरूस्त आयद, बिलार के गले में घंटी कौन बाँधे, भागते भूत की लँगोटी आदि ।

इसके साथ - साथ वर्माजी की वे स्व-निर्मित सूक्तियाँ हैं, जो उनकी सूक्ष्मग्राही अन्तर्दृष्टि की परख प्रस्तुत करते हैं । कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं - जैसे, सत्ता भुज बल में नहीं, रूपये में है;[12] शास्त्रों में लिखा है कि अप्रिय सत्य नहीं बोलना चाहिए,[13] भला धनुष से निकला तीर और मुंह से निकली बात वापस लौटते है ।[14] अपमान करने वाले सबल होते हैं, जिनका अपमान

किया जाता है वे निर्बल होते हैं ।[15] इस दुनिया में जीवित वह रह सकता है जो समर्थ है;[16] एक तबाह होता है उसकी तबाही पर दूसरा बनता है;[17] कौड़ी - कौड़ी के लिए मोहताज होना,[18] नियति के क्रम को भला कोई बदल सका है ।[19] मेरे रथ का पहिया जमीन से ऊपर उठकर चलता भी नहीं कि वह जमीन से लग जाएगा,[20] प्रेम को पागलपन का दूसरा रूप माना जाता है;[21] धरमराज का बाप बनना,[22] कमीनों की कदर कमीनों के घर में ही हुआ करती है[232] आदि ।

उपन्यास में व्यंग्य - गर्भित उक्तियाँ यत्र - तत्र भरी पड़ी हैं । इसके कुछ उदाहरण हम कथोपकथन के संदर्भ में चतुर्थ अध्याय में दे चुके हैं । यहाँ एक - दो उदाहरण द्रष्टव्य हैं ।

राजा चन्द्रभूषणसिंह, "इनसे मिल चुका हूँ मीर साहेब । और उससे भी ज्यादा इनकी बाबत सुना है । नेक होते हुए भी बड़े न्यायप्रिय हैं, और अपने कर्तव्य के प्रति बड़े उत्साही हैं ।" और इस बार वे ज्वालाप्रसाद से बोले, "आप यहीं थे और मैंने आपको देखा ही नहीं । जहाँ तक मेरा खयाल है आपको पीने से कोई परहेज नहीं । लीजिए, खुद गिलास में ढाल लिजिए । पिछली दफा बरजोरसिंह ने आपके लिए ढ़ाली थी, और उस ढ़ालने का जो पुरस्कार आपने उसे दिया, उसे देखते मुझे आपके लिए ढालने में ड़र लगता है ।"[24]

यहाँ ज्वालाप्रसाद की ईमानदारी और कर्तव्य पर व्यंग्य बान कसा है, क्यों कि बारजोरसिंह की मौत के जिम्मेदार ज्वालाप्रसाद थे । उनके बयान पर ही बरजोरसिंह के खिलाफ प्रभुदयाल के खून के जुर्म में गिरफतारी का वारण्ट निकला था और अपने पकड़े जाने के ड़र से वह आत्महत्या कर चुका था । उसी प्रकार भारतीय लोगों की राजभक्ति पर व्यंग्य करते हुए ज्ञानप्रकाश मिस्टर ग्रिफिथ्स से कहता है, "राज-भक्ति हमारे धर्म का एक महत्त्वपूर्ण भाग है । राजा जैसा भी हो, यहाँ ईश्वर का अवतार माना जाता है । इसलिए राजा के विरूध्द कोई हथियार नहीं उठा सकता - अनादी काल से हमारे धर्म में यह सिखाया गया है ।"[25]

'भूले बिसरे चित्र' की भाषा प्रायः पात्रानुकूल और प्रसंगानुरूप है । पात्रानुकूल भाषा होने के कारण संवाद अत्यंत रोचक और स्वाभाविक हो उठे हैं । विशेषकर घसीटे, छिनकी और भीखू के संवादों में लोक-भाषा का ऐसा उन्मुक्त प्रवाह तथा माधुर्य है, जो पाठकों को मोहित कता है । छिनकी का चुलबुलापन, उसकी मिजाजी और स्पष्ट वादिता उसकी भाषा में फूट पड़ी है । "आगी लागै तुम्हारे बैदजी माँ । दस दफा तो दवाई बदल चुके हैं, मुला तबीयत खराबै होत जात है । परों से उइ दवाईव छोड़ दीन्हिन है ।"[26] घसीटे की भाषा का एक उदाहरण द्रष्टव्य है :

"काहे हो मुंशी दुई महिना से ऊपर हुइ गए हैं हमका बीमार पड़े । बहुत दवा - दारू कीन, मुला कौनो फायदा न भवा । ई तबियत ससुरी बिगड़ती गई । तौन हम आज सोचा कि मुंसी के साथ बैठके थोड़ी - सी दारू पियत; जो कुछ होय का है सो तो हुई है ही।"[27] डा. कुसुम वार्ष्णेय के मतानुसार, "वर्माजी की भाषा स्वयं लोक प्रचलित उर्दू - शब्द - युक्त है, किन्तु जहाँ उन्होंने मुसलमान पात्रों का वार्तालाप दिखाया है, वहाँ उनकी भाषा विशुध्द उर्दू मिश्रित है । शिक्षित पात्रों के संवाद परिष्कृत भाषा में हैं और उनके प्रौढता के प्रतीत है ।"[28] इस संदर्भ में मीर सखावत हुसेन की भाषा अवलोकनीय है --

"सुन रहे हो बरखुरदार, कि तुम्हारे इन्साफ और धर्म का क्या नतीजा हुआ ? लेकिन मैं ठाकुर गजराजसिंह को यह समझाने की कोशिश कर रहा था कि जहाँ इन्साफ और फर्ज में और दया - धरम में अगर कहीं उलझन पड़ जाए वहाँ तरजीह फर्ज और इंसाफ को ही देनी चाहिए । और इस लिहाज से तुमने जो-कुछ किया वही मुनासिब था ।"[29] यहाँ भाषा विशुध्द उर्दू - शब्द - युक्त है तो ज्वालाप्रसाद, गंगाप्रसाद, नवल, विद्या, ज्ञानप्रकाश आदि शिक्षित हिन्दू पात्रों की भाषा परिष्कृत और प्रौढ़ है । इसके दो उदाहरण प्रस्तुत हैं --

गंगाप्रसाद - "मैं खुद नहीं जानता कि मन में थकावट क्यों है । लेकिन मुझे कुछ ऐसा लगता है कि चीजों की शक्लें तेजी के साथ बदल रही हैं और जीवन में एक तरह की कुरूपता भरती जा रही है । यही नहीं मुझे ऐसा भी लगता है कि कहीं कोई बहुत बड़ी विपत्ति आने वाली है ।"[30]

ज्वालाप्रसाद - "नहीं सुनता मेरी बात । मुझे अबोध और अज्ञानी समझता है वह । मैं नहीं समझ पा रहा हूँ उसे, पता नहीं, मेरी समझ नष्ट हो गई या उसकी कुछ ज्यादा बढ़ गई ।"[31]

भाषा में प्रसंगानुकलता का गुण पर्याप्त मात्रा में विद्यमान है । प्रसंग चाहे प्रेम का हो, चाहे क्रोध का, चाहे मृत्यु का सर्वत्र भाषा प्रसंग के अनुकूल स्वाभाविक तथा सजीव बन पड़ी है । उदाहरण के लिए मुंशी शिवलाल के संवादों को लिया जा सकता है । जब मुंशी शिवलाल ज्वालाप्रसाद को जिला न्यायाधिपति के सामने झूठा बयान देने को कहते हैं तो ज्वालाप्रसाद अपनी ईमानदारी पर अड़ जाता है, तब मुंशी शिवलाल क्रोध में आकर उसे कहते हैं, "बड़ा धरमराज का बाप बन रहा है । अच्छीखासी जमींदारी छोड़ दे रहा है । मैं क्या जानता था कि मेरा लड़का उल्लू का पट्ठा निकलेगा । .... बोलता क्यों नहीं है हरामजादे । तुझे पैदा किया, पढ़ाया -

सिखाया, यह सब इसलिए किया कि मेरी बात मानने में तू धरमराज का बाप बने ।"[32] इसके विपरीत उसके अन्तिम समय की करूणामय प्रेम भरी भाषा देखिए : "जा रहा हूँ बेटा, मुझे माफ करना । गलती तुम्हारी नहीं थी, चलो इस बुढ़ापे से तो छुटकारा मिला ।"[33]

उपन्यास की भाषा आद्योपान्त भावानुरूपता से भरपूर है । लगभग सभी पात्रों की भाषा उनकी भाव भंगिमाओं के चित्रण में अत्यंत सहायक, मार्मिक, बिम्बात्मक तथा सजीव बन गई हैं । यहाँ जैदेई के अन्तिम समय की विवशतापूर्ण भाषा का उदाहरण द्रष्टव्य है - 'कितना सहा है इस जिन्दगी में देवरजी । भगवान ने मुझे सहने को जो पैदा किया था । पति दिया - बेईमान और निर्मम । कोख से पैदा किया बेटा - बेईमान और निर्मम । दुनिया को इन दोनों ने कितना सताया है । और मैं सब - कुछ देखती रही अपनी छाती पर पत्थर रखकर ।"[33]

वाक्य योजना की दृष्टि से भगवती बाबू की प्रवृत्ति प्रेमचन्द की वाक्य योजना के निकट बैठती है । उपन्यास में वाक्य रचना प्रायः सर्वत्र परिष्कृत है किन्तु कुछ स्थलोंपर वाक्य रचना शिथिल तथा दोषपूर्ण भी है । इसके पीछे लेखक की असावधानी और मुद्रण की गलतियाँ प्रमुख रूप से जिम्मेदार हैं । देखिए --

1. 'फिदवी को देखते ही मुसम्मी मैकूलाल ने कड़ककर फिदवी से उस कर्ज का तकाज किया जो फिदवी मुसम्मी मैकूलाल को एक अरसा हुआ मैं (अनावश्य) सूद - दर - सूद के अदा कर चुका है ।"[34]
2. "उससे देश का नवयुवक बहुत अधिक (इनमें से किसी एक शब्द या उनके स्थान पर 'अत्यधिक' शब्द का प्रयोग होना चाहिए था) क्षुब्ध हो उठा ।"[35]
3. "अरे उसे कौन (सी) नौकरी करनी है जो वह 'बी.ए.' पास करे ।"[36]
4. "चार - पाँच महीने का (ही) तो मामला ही है ।"[37]
5. "प्रेमशंकर ने एम.ए. फर्स्ट डिवीजन में पास किया था; उसके बाद वह वकालत पढ़ने लगा (था) ।"[38]
6. 'छिनकी चाची तुम्हार ता (तो) रोजै की यह बात आय ।"[39]
7. "नहीं, मैं इडिण्यन (इण्डियन) हूँ ।"[40]
8. "जरा यह समझने को (की) बात है ।"[41]
9. "क्या बतलाऊँ, गंगा ने कह (यह) करार किया था ।"[42]
10. उपन्यासकार ने पात्रों की भाषा में प्रायः 'जलूस' शब्दका प्रयोग किया है, वहाँ तक यह शब्द-प्रयोग ठीक लगता है किन्तु अपनी निजी ...

टिपपणियों में उन्होंने कुछ स्थलों पर 'जलूस'[43] तो कुछ स्थलों पर सही शब्द 'जुलूस'[44] का प्रयोग किया है । उसी प्रकार न जाने क्यों वर्माजी ने प्रथम तीन खण्डों तक प्रभुदयाल के पुत्र का नाम 'लक्ष्मीचन्द' तो चौथे खण्ड में प्रायः सर्वत्र 'लक्ष्मीचन्द्र' लिखा है । उपर्युक्त गलतियों के संदर्भ में हम कहेंगे कि ये बहुत-ही साधारण भूलें हैं, जो उपन्यासकार की असावधानी और कदाचित पात्रों के बोलचाल के लहज़े की प्रवृत्ति तथा मुद्रण की वजह से हुई हैं । इन अशुध्दियों से भाषा - प्रवाह में कोई बहुत बड़ा व्याघात उपस्थित नहीं होता । पाठक उनके स्थान पर सम्भावित शब्द या अर्थ को तुरन्त महसूस करता है ।

कुछ आलोचक 'भुले बिसरे चित्र' उपन्यास की भाषा - शैली में औदात्य और गरिमा की कमी महसूल करते हैं । डा.सुषमा गुप्ता का मंतव्य है कि, 'भूले बिसरे चित्र' में औदात्य का अभाव है । उपन्यास में जन साधारण की आम बोलचाल की भाषा का प्रयोग हुआ है । भाषा में पात्रानुकलता का गुण विद्यमान है । ..... विचारों को सफल सम्प्रेक्षण के कारण ही उपन्यास की भाषा गरिमापूर्ण भी हो उठती है । भगवतीचरण वर्मा ने भी इस दृष्टि से कुछ सफलता प्राप्त की है, किन्तु उनकी भाषा प्रेमचन्द की भाँति महान नहीं बन सकी है ।"[45] डा. सुषमा गुप्ता का मंतव्य उचित प्रतीत होता है । वर्माजी की भाषा - शैली प्रेमचन्द की भाषा - शैली की बराबरी तो नही कर सकती किन्तु प्रेमचन्दोत्तर उपन्यासों की भाषा - शैली में प्रस्तुत उपन्यास की भाषा शैली अद्वितीय है, अपने आप में परिपूर्ण है । डा. रमाकान्त श्रीवास्तव ने वर्माजी के उपन्यासों की भाषा-शैली पर लिखा है - "सजगता के उपरान्त भी 'चित्रलेखा' की भाषा में प्रवाह है और सहजता भी है । उनके शेष उपन्यास व्यावहारिक चलतू भाषा में है । भगवती बाबू की विशिष्टता यह है कि साधारण भाषा में भी जीवन और जगत के चित्र खिंचने की उनमें उद्‌भुत क्षमता है ।"[46] डा. देवीशंकर अवस्थी आलोच्य उपन्यास की भाषा - शैली की सराहना इन शब्दों मे प्रकट करते हैं : "उपन्यास की भाषा में बोलचाल का वही सहज-सरल स्वर है जो हमें प्रेमचन्द में मिलता है । लेखकने आलंकारिकता या अतिरिक्त भावुकता से भरी भाषा का प्रयोग न करके भाषा के जिस गठन और लहजे को स्वीकार किया है वह उपन्यास को अधिक रोचक और सार्थक बनाता है ।"[47]

निष्कर्ष :

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि सरस भाषा शैली के योगदान से 'भूले बिसरे चित्र' उपन्यास की रोचकता, प्रवाह और स्वाभाविकता में कलात्मक वृध्दि हुई है । उपन्यास की भाषा

उर्दू - फारसी - युक्त आम बोलचाल की भाषा है, जो माधुर्य गुणों से युक्त होते हुए भी सरल, सुबोध, एवं मार्मिक भावों की अभिव्यक्ति में सक्षम तथा प्रभावशाली है । सजीवता, सरसता, भावानुरूपता, प्रसंगानुकूलता, परिस्थितिनकूलता, प्रवाहमयता तथा चित्रात्मकता इसके मुख्य गुण हैं । ग्रमीण पात्रों की भाषा स्वाभाविक लोक-भाषा है तो मुस्लिम पात्रों की भाषा विशुध्द उर्दू - मिश्रित है तथा शिक्षित पात्रों की परिष्कृत या टूटी - फूटी हिन्दी बोलचाल की भाषा है । प्रसंगानुकूल लाक्षणिक और व्यंग्यात्मक उक्तियों से समृध्द, मुहावरों, लोकोक्तियों, सूक्तियों और समानार्थी शब्द-युग्म आदि के सहज स्वाभाविक प्रयोग से भाषा में सप्राणता तथा लोच परिलक्षित होता है । अतः निःसन्देह 'भूले बिसरे चित्र' की भाषा शैली विशिष्ट गरिमा से मंडित है । भगवती बाबू को इसमें पर्याप्त सफलता मिली है ।

x x x

संदर्भ संकेत सूची

1. सिनहा सुरेश डा., हिन्दी उपन्यास, पृ . 392
2. शुक्ल बैजनाथ प्रसाद डा., भगवतीचरण वर्मा के उपन्यासों मे युगचेतना, पृ. 447
3. - वही - पृ. 450
4. वर्मा भगवतीचरण, साहित्य के सिध्दान्त तथा रूप, पृ. 4-5
5. - वही - पृ. 21
6. वर्मा भगवतीचरण, भूले बिसरे चित्र, पृ. 22-23
7. - वही - पृ. 358-59
8. - वही - पृ. 1-2
9. - वही - पृ. 649
10. - वही - पृ.562
11. - वही - पृ. 667
12. - वही - पृ. 42
13. - वही - पृ. 44
14. - वही - पृ. 44
15. - वही - पृ. 49
16. - वही - पृ. 55
17. - वही - पृ. 55
18. - वही - पृ. 89
19. - वही - पृ. 63
20. - वही - पृ. 170
21. - वही - 171
22. - वही - पृ. 171
23. - वही - पृ. 361
24. - वही - पृ. 103
25. - वही - पृ. 411

26. - वही - पृ. 77

27. - वही - पृ. 78

28. वार्ष्णेय कुसुम डा., भगवतीचरण वर्मा, पृ. 124

29. वर्मा भगवतीचरण 'भूले बिसरे चित्र' पृ. 73

30. - वही - पृ. 530

31. - वही - पृ. 698

32. - वही - पृ. 171

33. - वही - पृ. 172

34. - वही - पृ. 1

35. - वही - पृ. 649

36. - वही - पृ. 619

37. - वही - पृ. 622

38. - वही - पृ. 563

39. - वही - पृ. 188

40. - वही - पृ. 408

41. - वही - पृ. 417

42. - वही - पृ. 603

43. - वही - पृ. 482

44. - वही - पृ. 710

45. गुप्ता सुषमा डा., हिन्दी उपन्यासों में महाकाव्यात्मक चेतना, पृ. 301-2

46. श्रीवास्तव रमाकान्त डा., व्यक्तिवादी एवं नियतिवादी चेतना के संदर्भ में उपन्यासकार भगवतीचरण वर्मा, पृ. 285-86

47. मोहन नरेन्द्र सं., आधुनिक हिन्दी उपन्यास, पृ. 204

x x x